उपसंहार

SHIVAJI UNIVERSITY
LIBRARY
KOLHAPUR

उपसंहार

हिंदी के प्रखर समीक्षक और प्रगतिचेता उपन्यासकार डॉ. देवेश ठाकुर के व्यक्तित्व और कृतित्व के वस्तुपरक आकलन का प्रयास मैंने प्रथम अध्याय में किया है । इस बात को स्वीकृति मिल चुकी है कि लेखक की कृतियों में उसका जीवन और व्यक्तित्व प्रतिबिंबित होता है । एक स्थान पर देवेश ठाकुर ने कहा हैं, "साहित्यकार के व्यक्तित्व को उसके कृतित्व से, या कृतित्व को उसके व्यक्तित्व से अलग करके नहीं देखा जा सकता । न ही देखा जाना-चाहीए । व्यक्तित्व की पहचान के लिए प्रारंभ में देवेश जी का यथार्थ जीवन-परिचय प्रस्तुत किया है । देवेश जी का समग्र जीवन आर्थिक कठिनाइयों के विरुद्ध संघर्ष करने में बीत गया है । संघर्ष में भी वे दृढ और आशावादी रहे हैं । पारिवारिक दायित्व का बोध देवेश जी में है फिर भी परिवार से संबंध विच्छेद करने का उनका निर्णय 'स्व' की रक्षा के प्रयास स्वरुप मानना चाहिए । वे अपने जीवन में जातीयता और सांप्रदायिकता के विरोध में रहे हैं । विवाह तथा संतान को लेकर अपने जीवन में पूर्ण रुप से संतुष्ट हैं । उनका व्यक्तित्व संपन्न तथा आदर्श है । वे स्पष्ट, मुँहपट तथा हँसमुख हैं । उनके व्यक्तित्व के परिचय से हमें जीवन के संघर्ष-पथ पर ईमानदारी के साथ अथक परिश्रम करने की प्रेरणा मिलती है । देवेश जी की सफलता का रहस्य अथक परिश्रम ही है । प्रतिभा की अपेक्षा अभ्यास को आप अधिक महत्त्व देते हैं । जिंदगी के विविध मोडों पर संघर्ष के समय उनकी जीजीविषा वृत्ति उन्हें क्रियाशील बनाती रही ।

हिंदी में देवेश जी जैसे कम लेखक हुए हैं, जिन्होंने समान रुप से समीक्षा और रचना दोनों का इतनी सार्थकता से निर्वाह कर इतनी सफलता एवं स्वीकृति पाई हो । देवेश जी का उपन्यास, कहानी, कविता, एकांकी, निबंध, शोध-ग्रंथ आदि सभी रचनाओं में संघर्षवादी तथा आस्थावादी स्वर ध्वनित होता है । उनकी रचनाओं में समाजोन्मुखी, स्वस्थ जीवन दृष्टि प्रकट हुई है । देवेश जी का व्यक्तित्व 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' उपन्यासों में प्रतिबिंबित हुआ है । आलोच्य उपन्यासों में प्राध्यापक देवेश जी की आत्मा की आवाज प्रकट हुई है । उनका जीवन संघर्ष का दस्तावेज है ।

द्वितीय अध्याय में 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' की कथावस्तु एक वास्तव जीवन एवं यथार्थ चरित्र पर आधारित है । देवेश जी ने अपने अध्यापकीय जीवन की वास्तविक घटनाओं

तथा प्रत्यक्ष अनुभूतियों को डॉ. शीतांशु जोशी इस पात्र के माध्यम से चित्रित किया है। अध्यापकों का स्वार्थ, पक्षपात, भ्रष्टाचार, अनैतिकता, जोड-तोड नीति और खुशामद आदि धाँधलियों का सफल चित्रण किया है। 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' का विषय विश्वविद्यालय एवं वहाँ के हिंदी विभाग पर केंद्रित है। इसमें एक ही घटना है - प्रोफेसर का पद और उसे प्राप्त करने के लिए किए जानेवाले प्रयास। 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' का नायक डॉ. शीतांशु जोशी कॉलेज में प्राध्यापक एवं अध्ययन, अध्यापन, लेखन और शोध कार्य में रत है। अत: हिंदी जगत में उन्हें सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। राजनीति, कूटनीति, जोड-तोड आदि हरकतों का उनमें अभाव है। वह अपनी स्पष्टवादिता के कारण मुँहफट है किंतु काबिल इन्सान है। उसने अपनी रचनाधर्मिता से सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्ति देते हुए मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा का स्तुत्य प्रयास किया है।

डॉ. ओछेलाल तथा डॉ. बांदोडकर जैसे अध्ययन विरोधी अध्यापक अपने सपनों एवं अपनी कुर्सी को बनाए रखने के लिए हर एक गुट एवं काली करतूतों का इस्तेमाल करते हैं। बडों की सेवा का हर एक तरीका उन्हें मालूम है। वे उपहार के नाम पर रिश्वत देते हैं। जरुरत पडने पर लडकी सप्लाय करते हैं। अपने कुलपति की जीवनी लिखकर उन्हें भी अपने पक्ष में कर लेते हैं। रुपए लेकर अपने सहयोगियों से शोध-प्रबंध लिखवा लेना तथा डिग्रियाँ देना उनका धंधा है। पुस्तकों के खरीद में कमीशन तथा रिश्वत लेकर पुस्तकों को पाठ्य-क्रम में स्थान देना वे अपना विशेषाधिकार मानतें हैं। इस प्रकार शिक्षा जैसा पवित्र क्षेत्र होते हुए भी ऐसी हरकतें खुले आम करने में उनके मन में बिल्कुल ग्लानि नहीं होती। लेखक ने आज के अध्यापक तथा स्वयं को बुद्धिजीवि कहलानेवाले लोगों का नैतिक पतन, बौद्धिक दिवालियेपन, अमानवीय आचरण और ऋग्ण मानसिकता का यथार्थ चित्रण किया है जिसके कारण कथावस्तु में स्वाभाविकता तथा रोचकता आयी है।

उपन्यासकार ने 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' उपन्यासों की कथावस्तु के माध्यम से शिक्षा जैस राष्ट्रीय महत्त्वपूर्ण प्रश्न को प्रामाणिकता के साथ उठाया है। साथ ही पाठक का ध्यान उस संकट की ओर खींचा है, जिस पर समय से पहले ध्यान नही दिया गया तो समस्त शिक्षा-व्यवस्था की गरिमा को कलंकित होने से कोई नहीं बचा सकेगा। यह कथा व्यथा सिर्फ शीतांशु की नहीं है

बल्कि हिंदुस्तान के समस्त विश्वविद्यालयों मे कार्यरत शीतांशु की है, जिनके हाथ जड से उखाड दिए हैं, जो इस जर्जर शिक्षा-व्यवस्था को सिर्फ देखते रहने के अलावा कुछ नहीं कर सकते । यह राष्ट्रीय बहस का विषय है क्योंकि इस दुर्दशा का हल एक शीतांशु से नहीं हो सकता इसके लिए हजारों शीतांशुओं की जरुरत है ।

विवेच्य उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखे गए हैं लेकिन उनमें विश्लेषाणात्मक, अभिनयात्मक, विवरणात्मक, व्यंग्यात्मक आदि शैलियों का भी कम-अधिक मात्रा में प्रयोग किया गया है । दोनों उपन्यासों में शैक्षिक वातावरण चित्रित है तथा उपन्यासों का समय स्वातंत्र्योत्तर कालीन है । इसमें मुंबई महानगर एवं विश्वविद्यालय के माहौल का वातावरण चित्रित हुआ है । उपन्यासों में भाषा का सही प्रयोग हुआ है । बोलचाल की हिंदी, अंग्रेजी और ऊर्दु की शब्दावली का सहज प्रयोग महानगरीय जीवन की यथार्थता को प्रकट कर देता है । भाषा पात्रानुकूल बन पडी है । पात्रों के स्तर के अनुरुप भाषा का प्रयोग हुआ है । पात्रों के हावभाव, अदाएँ, चाल-ढाल आदि का बडी सूक्ष्मता के साथ लेखक ने चित्रण किया है । इसमें जैन, तिवारी, रामजनक आदि अध्यापकों का अंदाज, एक्शन्स तथा नीला, सुमन और मिस डी सिल्वा की अदाएँ पाठक का ध्यान खींचती हैं, इसकारण कथावस्तु में रोचकता आयी है । उपन्यासकार का कवि मन विवेच्य उपन्यासों में दृष्टिगोचर होता है । प्रसंगानुरुप काव्यात्मक पढने में दिलचस्पी पैदा होती है । इनके शीर्षक भी व्यंग्यात्मकता को ध्वनित करते हैं । अत: हिंदी राष्ट्रभाषा और उसकी दुर्दशा तथा शिक्षा जैसी ज्वलंत समस्या का केंद्रिय विषय होने के कारण कथावस्तु में मौलिकता दिखाई देती है । कुल मिलाकर 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' जैसी सशक्त और सोद्देश्य रचनात्मक कृतियाँ देने में डॉ. देवेश ठाकुर सफल रहे हैं ।

तृतीय अध्याय में विवेच्य उपन्यासो में चित्रित शिक्षा-व्यवस्था का प्रशासन पक्ष एवं व्यवस्थापन पक्ष के अंतर्गत विवेचन विश्लेषण प्रस्तुत किया है । डॉ. देवेश ठाकुर ने अपने इस उपन्यासों में महाविद्यालय शिक्षा-व्यवस्था एंव विश्वविद्यालयीन शिक्षा-व्यवस्था कों केंद्रीय विषय बनाया है । देवेश जी स्वयं मुंबई विश्वविद्यालय से संलग्नित महाविद्यालय में अध्यापक के रुप में कार्यरत थे । इस कारण उन्होंने अपने इस उपन्यासों में शिक्षा-व्यवस्था का अपने अनुभव की प्रामाणिकता के आधार पर चित्रण किया है । प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित

विश्वविद्‌यालयीन एवं महाविद्‌यालयीन शिक्षा-व्यवस्था के प्रशासन एवं व्यवस्थापन पक्ष में कई खामियां देखी जा सकता हैं। जिस प्रकार ज्ञान का अभाव होते हुए भी कुछ व्यक्ति मुख्यमंत्री पद पर आसीन हैं परिणामस्वरुप, शिक्षा-व्यवस्था की समस्याएं उनके समझ में भी नहीं आती अत: ऐसे मंत्रियों से शिक्षा सुधार की अपेक्षा करना व्यर्थ ही होगा। कुलपतियों की भी जाति-पाँति, रिश्वत, राजनीतिक लगाव और व्यक्तिगत संबंधों के आधार पर नियुक्तियाँ होती हैं, सहायक कुलसचिव, कुलसचिव जैसे पदाधिकारी भी भ्रष्ट दिखाई देते हैं, अधिकांश विभागाध्यक्ष अपने सहयोगी अध्यापकों को तरह-तहर की तकलीपों से परेशान करते हैं तथा अपने विभाग के विकास अवरोधी हैं, इतनाही नहीं तो प्राचार्य से लेकर चपरासी तक सभी भ्रष्टाचार में लिप्त हैं तथा इनमें उत्तरदायित्व बोध का अभाव देखने को मिलता है।

व्यवस्थापन पक्ष के अंतर्गत भी अनेक भ्रष्ट पदाधिकारी कार्यरत हैं। व्यवस्थापन समिति में प्राचार्य अपनी रणनीति से सही अध्यापक को गलत साबित करते हैं तथा गंदी राजनीतिक दाँवपेच शिक्षा क्षेत्र मे लाते हैं। 'अध्ययन मंडल' में भी तिकडमी अध्यापकों के आने की वहज से यह मंडल जातिवाद और गुटबंदी का केंद्र बन गया है तथा 'अॅकॅडमिक कौंसिल' में भी भ्रष्ट एंव चापलुस सदस्य कार्यरत दिखाई देते हैं।

इसतरह, विवच्य उपन्यासों में चित्रित शिक्षा-व्यवस्था में प्रशासन एवं व्यवस्थापन स्तर पर कम या अधिक मात्रा में भ्रष्टाचार, जातिवाद, अनुशासनहिनता, अपने कर्तव्य के प्रति उदासिनता, उत्तरदायित्व-बोध का अभाव, क्रियाहीनता आदि व्याप्त हैं। यह शिक्षा-व्यवस्था का एक सामुहिक पतन है जिसमें कुलाधिपति से लेकर चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी तक आकण्ठ निमग्न हैं। इसका असर समस्त शैक्षिक परिवेश पर पडा है। कौन नहीं जानता कि कॉलेजों और विभागों में पढाई नहीं होती, परीक्षाओं में बडे पैमाने पर नकल होती है, रिश्वत और पैरवी के आधार पर अच्छे अंक पाये जाते हैं, ईमानदार और अध्ययनशील अध्यापकों एवं छात्रों को उपेक्षित रखा जाता है, जाति-पाँति, रिश्वत के आधार पर नियुक्तियाँ होती हैं, छात्रों तथा अध्यापकों के संबंधो में भी नैतिक गिरावट हो रही है जिससे विश्वविद्‌यालयीन परिवेश दूषित हो रहा है। कौन नहीं जानता कि अध्यापक अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते हैं और उनमें से अनेक भ्रष्टाचार में

लिप्त हैं। इस पूरी सच्चाई को देवेश ठाकुर जी ने प्रस्तुत उपन्यासों में चित्रित करने का साहस किया है, जिसके लिए वे निश्चय ही प्रशंसा के पात्र हैं।

चतुर्थ अध्याय में विवेच्य उपन्यासों चित्रित शिक्षा-व्यवस्था के भ्रष्टाचार को परीक्षाएँ, शोध, नौकरी, अध्यापक स्त्री-छात्र संबंध आदि बिंदुओं के आधार पर उजागर किया है। उपन्यासकार देवेश ठाकुर जी ने विवेच्य उपन्यासों के माध्यम से आज के भ्रष्ट शिक्षा-व्यवस्था की बीभत्स तस्वीर पाठकों के सामने प्रस्तुत की है। वस्तुतः शिक्षा-व्यवस्था अपने पुरातन आदर्शों को छोडकर आज ऐसे मुकाम तक पहुँच गयी है जहाँ स्वार्थ, भ्रष्टाचार एवं नैतिक-चारित्रिक पतन के रुप में चाहे परीक्षाएँ हो, शोधकार्य हो, नौकरी पाना हो या उसे बनाए रखना हो सर्वत्र भ्रष्टाचार दिखाई देता है।

कुछ शिक्षाविरोधी एवं भ्रष्ट अध्यापकों ने परीक्षा पद्धति को एक व्यवसाय बनाया है जिससे अधिक से अधिक धन कमाया जा सके। कुछ अध्यापक तो अपने कर्तव्य को भूलकर छात्रों के अंक बढाने का धंधा करते हैं। विवेच्य उपन्यासों का नायक डॉ. शीतांशु जैसा एकाध अध्यापक ही इस भ्रष्ट परीक्षा पद्धति के खिलाफ आवाज उठा रहा है। परीक्षा के साथ-साथ अनेक शिक्षाविरोधी अध्यापकों ने अपने स्वार्थ के लिए पीएच्.डी., डी.लिट्. जैसी उपाधियों का बाजार बनाया है। जो जितना अधिक पैसा फेंकेगा उसे जल्द से जल्द आसानी से उपाधि मिलती है। शोधछात्रों का आर्थिक शोषण किया जाता है, पैसे लेकर शोधार्थियों के प्रबंध लिखे जाते हैं। अध्ययनशील अध्यापकों को शोधनिर्देशक बनने में रुकावटें डाली जाती हैं परिणामस्वरुप शोध का स्तर गिरता जा रहा है।

शिक्षा क्षेत्र पर डॉ. ओछेलाल, डॉ. जैन, डॉ.तिवारी, डॉ. कृष्णकान्त, डॉ. बी.जे., डॉ. सदानंद जैसे अध्ययनविरोधी अध्यापकों का एकाधिकार है। ये लोग रिश्वत लेकर अध्ययनविरोधी एवं भ्रष्ट अध्यापकों की नियुक्ति अध्यक्ष, प्रोफेसर, कुलपति पद पर करते हैं जिससे भ्रष्टाचार को और अधिक बढावा मिलता है। उपन्यासकार ने डॉ. ओछेलाल और उनकी छात्रा सुमन, डॉ. जैन और उनकी छात्रा नीला सबनीस, प्रा. तिवारी तथा उनकी गुजराती छात्रा के अनैतिक संबंधों को दिखाकर इस बात की ओर संकेत दिया है कि, शिक्षा-व्यवस्था में नैतिकता का स्तर गिरता जा रहा हैं एवं उसका पतन हो रहा है। उपन्यासकार ने शिक्षा-व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार उजागर कर

पाठकों को यह संकेत दिया है कि, शिक्षा-व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार को तिलांजली देनी चाहिए नहीं तो समस्त शिक्षा-व्यवस्था नष्ट-भ्रष्ट हो जाएगी।

पंचम अध्याय के अंतर्गत आलोच्य उपन्यासों में चित्रित शिक्षा-व्यवस्था की समस्याओं को उजागर किया है। आज की शिक्षा-व्यवस्था में विशेषकर विश्वविद्यालयीन शिक्षा-व्यवस्था में पनपती हुई समस्याओं को 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' के माध्यम से उपन्यासकार देवेश ठाकुर ने पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। उनके हर उपन्यास अध्यापक, शिक्षा-व्यवस्था या उनकी समस्याओं पर आधारीत है। 'गुरुकुल' और 'शिखर पुरुष' उपन्यास में शिक्षा-व्यवस्था और उनमें चल रही धाँधलियों का यथार्थ चित्रण किया है। विवेच्य उपन्यासों में शोधकार्य, परीक्षाएँ, नौकरी, भ्रष्टाचार, राजनीति, अनैतिकता आदि समस्याओं को शब्दबद्ध किया है जो लेखक की अनुभूति पर आधारीत है अत: सौ प्रतिशत यथार्थ बन पडी है।

विवेच्य उपन्यास में शोध-कार्य की समस्या का विस्तार से विवेचन किया गया है। कुछ अध्ययनविरोधी अध्यापकों ने पीएच्.डी. तथा डी.लिट. जैसी उपाधियों का बाजार बना दिया है जिसके लिए रिसर्च स्कॉलरों का आर्थिक शोषण किया जाता है। अनुसंधान करनेवाला पुरुष हो तो उससे श्रम और रुपए ऐंठ लिए जाते हैं और यदि वह स्त्री हो तो उसके सौंदर्य तथा शरीर का नाजायज लाभ उठाया जाता है। मगर अब इसका विरोध भी शुरु हो गया है, समवेत न सही एकाकी ही सही। युवा पिढी का प्रतीक थापा इस व्यवस्था के शोषण और अन्याय से पीडित होकर, शोधनिर्देशक डॉ. ओछेलाल की टाँगे तोड देता है।

शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में नंगई, लुच्चई, पक्षपात से युक्त तथा स्वार्थ भरी दृष्टि आदि के साथ अनैतिकता की समस्या भी बडे पैमाने पर प्रविष्ट होने के कारण संपूर्ण शिक्षा-व्यवस्था का पतन हो रहा है। 'गुरुकुल' उपन्यास में तो अनैतिकता अपने चरमोत्कार्ष पर पहुँची हुई दिखाई देती है जो शारीरिक धरातल पर पहुँच जाती है। इसके लिए अध्यापक और उनकी छात्राओं को कोई शर्म तथा ग्लानि महसूस नहीं होती। डॉ. ओछेलाल और उनकी छात्रा सुमन, प्रा. तिवारी और उनकी गुजराती छात्रा तथा डॉ. जैन और उनकी छात्रा तथा प्रेमिका नीला सबनीस के शारीरिक संबंधों को दिखाकर उपन्यासकार ने आधुनिक गुरुकुलों की पोल खोल दी है। हमारे देश में शिक्षा की उन्नति के मार्ग में अटका हुआ बहुत बडा पहाड है, उसमें राजनीति का प्रवेश।

राजनीतिक प्रभाव के कारण करने योग्य बातें पीछे रह जाती हैं और न करने योग्य सामने आ जाती हैं। शिक्षामंत्री, मुख्यमंत्री से लेकर केंद्रीय मंत्रियों के माफियों ने शिक्षा-व्यवस्था को अपने काबू में लिया है। ये लोग रिश्वत लेकर अध्ययन विरोधी अध्यापकों को अध्यक्ष, प्रोफेसर और कुलपति बनातें हैं तथा उनके अवकाश ग्रहण की अवधि बढाकर फिर सें ऊँचे पदों पर आसीन कराते हैं। परिणाम स्वरुप डॉ. शीतांशु, डॉ. परचुरे, डॉ. अरोडा जैसे ईमानदार, नैतिक, रचनाधर्मी, अध्ययनशील अध्यापक इसमें पिसे जाने हैं, उपेक्षित रह जाते हैं।

शिक्षा-व्यवस्था में रत विविध समस्याओं के साथ-साथ अध्यापकों में व्याप्त घटियापन, गुठबंदी, साँठगाँठ, भ्रष्टाचार आदि को तिलांजली देनी चाहिए नही तो संपूर्ण शिक्षा-व्यवस्था और अध्यापक वर्ग भ्रमित और दिशा-ज्ञान रहित हो जाएगा। ऐसा न होने पर उसके अपने लिए तो विनाश का द्वार खुला ही है, वह देश, राष्ट्र, मानवता और शिक्षा-व्यवस्था के लिए भी विनाश का द्वार खोलनेवाला प्रमाणित हो सकता है। सभी प्रकार के पहलुओं को सामने रखकर यह स्पष्ट किया है कि आज के जागरुक शिक्षा विशेषज्ञों, राजनीतिज्ञों, संस्थाचालकों, अध्यापकों को इस बात का निर्णय करना है कि शिक्षा-व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्ट प्रवृत्ति, हीन राजनीति, अनैतिकता, लोभ और धोखेबाजी उनके लिए कहाँ तक लाभदायक और हानिकारक सिद्ध हो सकती है। उपन्यासकार देवेश ठाकुर को शिक्षा-व्यवस्था एवं उनके समुख उपस्थित समस्याओं को उजागर करने में सफलता मिली है।